सम्पादकीय लेख
हिन्दी साप्ताहिक – **राष्ट्रवादी संकल्प**
मुख्य संम्पादक – **श्री तारिक़ अनवर, सांसद**

अंक : दिनाँक 27 नवम्बर, 2009

मुम्बई हमले से सबक

मुम्बई पर हमले की बरसी पर एक बार फिर यही सोचने का समय है कि देश के आत्मसम्मान पर हुए इस हमले से हमने क्या सबक लिया। पूरे देश को दहला देने वाला यह हमला कोई मामूली हमला नहीं था। इस हमले ने हमारी सुरक्षा की कलई की कई परतों को उतार दिया। इस बार आतंकवादी देश में छुपे बैठे नहीं थे। वे धड़धड़ाते हुए हमारी जल सीमा का सीना चीरकर आये और अपनी–अपनी पोजीशन पर बड़ी आसानी से पहुँच गये।

हमारे यहाँ व्याप्त भ्रष्टाचार ने उन्हें फर्जी पहचान पत्र उपलब्ध करा रखे थे। उनके पास सभी ज़रूरी नक्शे और काग़जात थे। उनकी तैयारी किसी युद्ध की तैयारी से कम नहीं थी। इस बार वो एक बड़े हमले की पूरी तैयारी से आये थे। उनके इस हमले से हम इतनी दहशत में थे कि 60 घंटों तक दिल थामे उस मंजर को टी.वी. पर देखते रहे। हमें भरोसा था कि अब हमारी फौजें उन्हें मार गिरायेंगी। ऐसा हुआ, लेकिन 60 घण्टों के संघर्ष और 166 जिंदगियों के नुकसान के बाद।

एक बार को लगा कि अब बस यह इन्तेहा हो गई । अबकी बार सरकार कोई ऐसा क़दम उठायेगी जिससे हम पर आतंकी हमले करने वालों की कमर टूट जायेगी। लेकिन हुआ क्या? जनता और मीडिया के दबाव ने राज्य में मुख्यमंत्री को बदलवा दिया फिर देश के गृहमंत्री को गद्दी छोड़नी पड़ी। देश की जनता का गुस्सा ठण्डा पड़ा। नया निज़ाम आया, सबूत इकट्ठे किये गये। आतंकियों के आकाओं को दिये गये। उनके भड़काउ बयान आये। विश्व बिरादरी ने हमको हमेशा की तरह संयम बरतने की सलाह दी। संवेदना प्रकट हुई। अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान में आतंकी अड्डों के खात्मे का संकल्प लिया गया। तत्कालीन अमेरिकी विदेश सचिव कोण्डालिजा राइस ने भारत व पाकिस्तान का दौरा किया और आतंकवाद के ख़िलाफ़ मिलकर लड़ने का संकल्प लिया। नतीजतन पाकिस्तान ने कुछ आतंकी नेताओं को पकड़ा लेकिन बाद में वे छोड़ दिये गये। पाकिस्तान ने बड़ी बेशर्मी के साथ भारत द्वारा दिये गये उन सबूतों को नाकाफी बता रहा है जिसे सारी दुनिया ने अपनी आँखों से देखा है। इसलिये पाकिस्तान से कोई भी उम्मीद रखना बेमानी है। कसाब हमारे कब्जे में है लेकिन उसे कब तक सजा मिलेगी यह हम नहीं कह सकते क्योंकि हमारी खुद की न्याय प्रणाली भी एसे मामलों की जांच में दशकों बिता देती है।

आज मुम्बई बेशक त्रिस्तरीय सुरक्षा के घेरे में है। महाराष्ट्र सरकार ने एन.एस. जी. की शैली पर एक नया पुलिस बल बनाया है। समुद्री सीमा की चौकसी बढ़ा दी

गई है। संसद पर हुए हमले के बाद संसद की सुरक्षा की भी ऐसी व्यवस्था कर दी गयी है। लेकिन हम शायद यह भूल रहे हैं कि आतंकवादियों के निशाने पर पूरा देश है। अब सवाल यह है कि मुम्बई के बाहर शेष भारत की सुरक्षा का क्या होगा? अगर फिर कहीं किसी और जगह पर हमला हो तो उसके लिये हमारी क्या तैयारी है ? भारत की इन विदेशी धरती पर चल रहे आतंकी अड्डों के बारे में क्या नीति है? हम कब अपने बल पर अपने ऊपर हुए हमलों का जवाब दे सकेंगे ? आख़िर इन हमलों से हमने सीखा क्या ?

अंक : दिनाँक 19 दिसम्बर, 2009

न्याय में देर या अन्धेर ?

सन् 84 के दंगो के वो तीन दिन आज़ाद भारत के इतिहास के वो काले दिन हैं जिन्हें हम गुजरात के दंगो की तरह हम कभी भी भुला नहीं पायेंगें। लेकिन विडम्बना यह है कि आज 25 साल बाद भी न ही हम उन दंगों की सही तरह से जांच कर पाये ताकि उन दंगों के लिये जिम्मेदार लोंगों को कड़ी सजा मिल सके और न ही हम उन परिवारों की किसी भी प्रकार की छतिपूर्ति कर सके जिन्होने उन दंगों में अपना सब कुछ खो दिया था। आज 25 साल बाद बहुत कुछ बदल गया है, उन दंगों से प्रभावित परिवारों के बहुत से लोग अब इस दुनिया में नहीं हैं। जो उस समय बच्चे अब जवान हो चुके हैं और दंगों में सब कुछ खो जाने के बाद जैसे तैसे अपने जीवन को फिर से पटरी पर ले आये हैं। लेकिन एक बात जो इतने दिनों में नहीं बदली वो है न्याय और जांच की गति। सीबीआई ने अब दंगों के आरोपितों के विरूद्ध जांच की अनुमति मांगी है लेकिन क्या अब 25 साल बाद हम यह उम्मीद कर सकते है कि जो भी सबूत और गवाह उसके पास आज हैं वो क्या इन्हीं आरोपियों के खिलाफ तब नही थे जब उन्हें क्लीन चिट दी गयी थी। आखिर हमने कौन सी न्याय व्यवस्था अपनायी है जिसमें न्याय के लिये हमें अपनी पूरी जिन्दगी इंतज़ार करना पड़ता है। दंगा पीड़ितो को जो नौकरी का वादा किया गया था वो भी अधूरा ही रह गया। पिछले 12 सालों से दिल्ली में एक ही दल की सरकार है इसलिये यह काम बहुत पहले ही किया जा सकता था। हालांकि गृहमंत्री ने इस बात को संसद में स्वीकार किया है और यह भी भरोसा जताया है कि सीबीआई को जांच की अनुमति और 1115 दंगा पीड़ितों को नौकरी का वायदा समयबद्ध सीमा के भीतर पूरा कर लिया जायेगा। लेकिन एसे न्याय का क्या करेगें जो समय बीत जाने के बाद मिले। सीबीआई अब कितने दिन में जांच पूरी करेगी, और फिर कितने साल मुकदमा चलेगा यह बाद की बात है, आज आरोपितों को दण्ड मिल भी जाता है तो वो 25 साल हम उन लोगों को कहां से दे सकेगें जो साल दंगा पीड़ितों ने दुश्वारियों और न्याय के इंतज़ार में बिता दिये। और इसके लिये सभी दोषी है आज जो भाजपा इस मुददे पर इतना बढ़ चढ़ कर बोल रही है उसने भी इन दंगों के बाद 10 साल दिल्ली पर और 6 साल केन्द्र में सरकार चलाई है तब उसे इस बात की फिक्र क्यो नहीं हुई। और भी गठबंधनो की सरकारों का बीच में शासन रहा है और लगभग पूरा विपक्ष उनमें शामिल रहा है इसलिये बेहतर यही है कि हम शीघ्रता से इन

दंगा पीड़ितो को न्याय दिलाने और उनके घावों पर मरहम रखने का काम करें ताकि न केवल न्याय हो बल्कि यह दिखे भी कि न्याय हुआ है।

अंक : दिनाँक 5 दिसम्बर, 2009
साम्प्रदायिक हिंसा को रोकने की शुरूआत

इस सप्ताह प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में सम्पन्न कैबिनेट की बैठक में सबसे महत्वपूर्ण फैसला साम्प्रदायिक हिंसा अधिनियम को संसद में पेश किये जाने के विषय में लिया गया।

कैबिनेट का यह फैसला बाबरी मस्जिद विध्वंस की जांच करने वाले लिब्राहन आयोग की सिफारिश पर केन्द्रीय गृहमंत्री पी. चिदम्बरम द्वारा कार्रवाही रिपोर्ट के संसद पटल पर रखे जाने के एक सप्ताह के भीतर आने से सरकार की इस विषय में गंभीरता का अंदाजा लगाया जा सकता है।

अब इस बिल के माध्यम से केन्द्र सरकार किसी भी राज्य के किसी भी क्षेत्र को साम्प्रदायिक रूप से संवेदनशील घोषित कर सकेगी और बिना राज्य से आग्रह मिले वहां पर केन्द्रीय बलों को भेज सकेगी। इसके अलावा इस बिल में एसे साम्प्रदायिक रूप से संवेदन शील घोषित क्षेत्रों में धारा 144 के उल्लंघन पर तीन साल की सजा का भी प्रावधान है। इससे पहले प्रशासनिक सुधार समिति भी एसी ही सिफारिश कर चुकी है और लिब्राहन आयोग ने भी राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिये धर्म के प्रयोग पर राजनैतिक दलों और प्रत्याशियों के विरूद्ध कड़ी कार्यवाही की सिफारिश की है।

निश्चित ही इससे भाजपा और उसके सहयोगी सकते में है क्योंकि इस बिल में साम्प्रदायिक दंगों से प्रभावित क्षेत्रों में दंगा नियन्त्रण, पीड़ितों की रक्षा और पुनर्वास से जुड़े विषय शामिल हैं। एक के बाद एक संकट से जूझ रही भाजपा राजस्थान से हाथ धोने के बाद गुजरात को केन्द्रीय सरकार की जांच के दायरे में देखना बर्दाश्त नहीं कर पायेगी। एसे में यह देखना महत्वपूर्ण होगा कि नेतृत्व के मुद्दे पर अपने अस्तित्व को बचाने के लिये जूझ रही भाजपा इस बिल के बाद क्या रूख अपनायेगी जबकि अपने पुनर्त्थान के लिये उसे इस समय आर एस एस के हिन्दुत्वादी एजेण्डे के अलावा कोई चारा नज़र नहीं आ रहा है।

अंक : दिनाँक 01 जनवरी, 2010
झारखण्ड में फिर ठगा गया लोकतन्त्र

झारखण्ड में जिस प्रकार से जनादेश का मज़ाक उड़ाया गया है वो देश के लोकतन्त्र के लिये एक गंभीर चिंता का विषय है। आज वहां पर वही दल सत्ता में हैं जिन्हे जनता ने नकार दिया है। भाजपा और उसके सहयोगी दल जद–यू के भंग विधान सभा में 36 विधायक थे जो इस चुनाव में घट कर 20 रह गये हैं इससे स्पष्ट

है राज्य की जनता ने कम से कम भाजपा को तो शासन करने का अधिकार नहीं दिया है लेकिन विडम्बना यह है कि खण्डित जनादेश ने एक बार फिर राज्य को एक अस्थिर सरकार की ओर धकेल दिया है। इससे यह एक बार पुनः सिद्ध हो गया है कि भाजपा और उसके सहयोगियों की कथनी और करनी में कितना फर्क़ है। तीन साल पहले सन् 2006 के विधान सभा चुनावों में भाजपा ने शिबू सोरेन पर लगे गंभीर अपराधिक मामलों के कारण उन्हें भयंकर अपराधी घोषित करते हुए चुनाव प्रचार किया था और आज वही भाजपा और उसके सहयोगी श्री सोरेन की सरकार में सहयोगी है, इससे आम जनता के सामने भाजपा के चाल और चरित्र के लुभावने दावों की कलई खुल गयी है। जनता यह देख रही है कि भाजपा में नेतृत्व अवसान के बाद अब इसके नैतिक पतन की भी शुरूआत हो चुकी है।

हमें यह ध्यान रखना होगा कि अस्थिर सरकारें जनता के विकास के प्रति समर्पित नहीं रहती इसलिये यह भी गंभीर चिंता का विषय है कि भ्रष्टाचार में आकठ डूबे इस राज्य में एसी मौका परस्त ताकतों द्वारा सरकार के गठन से राज्य की जनता को क्या उम्मीद रखनी चाहिये यह तो आगे आने वाले समय में सामने आ ही जायेगा। श्री सोरेन पर उनके सचिव की हत्या के आरोप का मुकदमा अभी सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन और इस वर्ष मार्च तक उस पर फैसला आने की उम्मीद है। यदि यह फैसला श्री सोरेन के विरू द्ध जाता है तो राज्य मे एक बार पुनः उहापोह की स्थिति आयेगी।

विडम्बना यह है कि प्राकृतिक सम्पदाओं से भरपूर यह राज्य अपने गठन के नौ सालों में सात सरकारों को बनते और गिरते देख चुका है और अगर इस अवधि में राज्यपाल शासन को भी जोड़ दिया जाये तो यहां औसतन 13 माह एक सरकार रही है यह एक बार पुनः हमें छोटे राज्यों के गठन के समय राज्य में स्थिर सरकार और विकासोन्मुख सरकार दे सकने की क्षमता पर सोचने को मजबूर करता है। इस बार के चुनावों में कांग्रेस और जेवीएम ने अच्छा प्रर्दशन किया परन्तु कांग्रेस और उसके चुनाव पूर्व सहयोगियों को पूर्ण बहुमत नहीं मिला। इसका एक बहुत बड़ा कारण कांग्रेस का स्वयं धर्मनिरपेक्ष दलों को साथ लेकर नहीं चलना है। देश और समाज को साम्प्रदायिकता से मुक्ति दिलाने और धर्मनिरपेक्ष मतों को एकजुट रखने के लिये कांग्रेस को सभी धर्मनिरपेक्ष दलों को साथ लेकर चलना होगा। अन्यथा भाजपा जैसी साम्प्रदायिक और मौकापरस्त ताक़तें हारी हुई बाजियों को जीत में बदलने की बाजीगरी करती रहेंगी और चुनाव पूर्व बना गठबन्धन सबसे अधिक संख्या बल के बावजूद विपक्ष में बैठेगा। और देश की धर्मनिरपेक्ष जनता सिद्धान्तहीन मौकापरस्त ताकतों को एसे ही लोकतन्त्र को ठगते हुए देखती रहेगी।

अंक : दिनाँक 8 जनवरी, 2010

पिछड़ापन बनाम पृथक राज्य

पृथक तेलंगाना राज्य के मुद्दे पर केन्द्र सरकार द्वारा जिस तरह आधी रात को बिना इसके परिणाम को सोचे नये राज्य की मांग को पहले स्वीकार कर लेने और फिर

स्थिति की गंभीरता को देखने के बाद निर्णय को स्थगित करने से देश के सामने एक राजनैतिक प्रश्न खड़ा हो गया है। इस प्रकार के जोखिम भरे निर्णय से न केवल आन्ध्र प्रदेश मे बल्कि कई अन्य राज्यों में भी राजनैतिक संकट उत्पन्न हो गया है।
निश्चित ही तेलंगाना विकास की दृष्टि से पिछड़ा हुआ क्षेत्र है और भी कई प्रकार की असमानतायें वहां पर हैं परन्तु यह कोई अकेला क्षेत्र नहीं है जो असमान विकास से ग्रसित है, परन्तु प्रत्येक एसे क्षत्र को पृथक राज्य का दर्जा देकर ही उनकी समस्याओं का समाधान किया जाना ही एकमात्र हल नहीं है। देश के विभिन्न राज्यो मे एसे क्षेत्र है जहां हमें योजनागत तरीके से उनके लिए विशेष पैकेज आदि के माध्यम से उन्हे विकास की मुख्यधारा से जोड़ने की आवश्यकता है, हमने पूर्व में भी एसे क्षेत्रों को विशेष योजनाओं अथवा स्वायत्तशासी क्षेत्र बना कर उन क्षेत्रों की समस्याओं को हल करने का प्रयास किया है और वहां की जनता को इससे लाभ भी हुआ है।

भारत विविधताओं का देश है यहां हम विविध संस्कृतियो, धर्मो, भाषाओं के बावजूद हम सदियों से एक साथ रहते आये हैं। विविधता में एकता हमारा हमें गर्व से भर देने वाला और हमारी विशिष्ट पहचान की याद दिलाने वाला नारा रहा है। आज़ादी के आन्दोलन के दौरान हमारे नेताओं ने और स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़ी सभी शक्तियों ने स्वतन्त्र भारत में सर्वांगीण चंहुमुखी विकास की कल्पना करते समय इस विषय को ही ध्यान में रखा था और आजादी मिलने के बाद हमने राज्यों का पुनर्गठन करते समय मात्र भाषा ही को आधार न बना कर आजादी के बाद कई देशी रियासतों के विलय से

राज्यों की भौगोलिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों एवं प्रशासनिक तथा आर्थिक स्थिरता तथा अन्य क्षेत्रीय समानताओं को ध्यान में रख कर ही राज्यों को पुनर्गठित किया था। यही कारण है कि हिन्दुस्तानी बोलने वाले क्षेत्र भौगोलिक आधार पर भिन्न राज्य बने।

यह अलग बात है कि भौगोलिक परिस्थितियो, नित नये बदलते राजनैतिक परिदृश्यों तथा योजनाओं के क्रियान्वयन में अनियमितताओं के कारण कुछ क्षेत्र विकास यात्रा में कुछ पीछे छूठ गये हैं परन्तु क्षेत्र के पिछड़ेपन का फायदा उठा कर कतिपय कुछ राजनैतिक दल क्षेत्रवाद को बढ़ावा देकर अपने तुच्छ राजनैतिक लाभ के लिये जनता को गुमराह करें और पृथक राज्य की मांग करें यह देश के भविष्य के लिये विनाशकारी सिद्ध होगा। तेलंगाना को स्वीकृति दिये जाने पर जिस प्रकार उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल में राज्यों के विभाजन तथा नये राज्यों के गठन की बातें उठीं उससे तो उन नेताओं के राजनैतिक एवं प्रशासनिक दिवालियापन ही प्रतीत होता है। राजनैतिक क्षुद्र लाभ के अतिरिक्त क्या कारण हो सकता है कि उत्तर प्रदेश को तीन टुकड़ों में बात की गयी जबकि वहां एक ही दल का शासन है। इसका स्पष्ट मतलब तो यह है कि वह सरकार अपने राज्य के समान विकास में अक्षम है। वह चाहे तो राज्य के सर्वागीण विकास के लिये वह स्वयं भी कोई कारगर कदम उठा सकती है।

यह माना जा सकता है कि कुछ छोटे राज्यों में तेजी से विकास हुआ है परन्तु छत्तीसगढ़ और झारखण्ड का क्या हाल है? झारखण्ड में पिछले नौ सालों में सात

मुख्यमंत्री बदले हैं। इसीप्रकार और जो भी राज्य अस्तित्व में आयेंगें उनका क्या भविष्य होगा यह कल्पना करना अभी केवल सुनहरा सपना ही होगा।

कुछ क्षेत्रीय दल एवं भाजपा और आर एस एस जैसे संगठन अपने निहित स्वार्थ के लिये छोटे राज्यो की वकालत करते आयें हैं। उनकी सोच क्षेत्रीय एवं सांस्कृतिक आधार पर राज्यों के बंटवारे की है यदि उनके अनुसार अगर चला जाये तो भारत सौ से अधिक राज्यों में विभक्त हो जायेगा। ऐसा भारत कितना मजबूत होगा इसकी सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है।

भारत एक लोकतान्त्रिक देश है जहां संसद एक सर्वोच्च निर्णायक संस्था है। हमें सभी निर्णयों को और जनता की आकांक्षाओं को को पूरा करने का संसदीय हल प्राप्त है। संसद एसी जनभावनाओं पर विचार कर कोई ठोस फैसला ले सकती है और अगर जरूरी है तो राज्यों के पुनर्गठन के लिये दूसरे राज्य पुनर्गठन आयोग का भी गठन किया जा सकता है परन्तु जिस प्रकार से तेलंगाना के मुद्दे पर जल्दबाजी में निर्णय लिया गया है उससे तो कई जिन्नों ने अपनी बोतल से बाहर आने की तैयारी कर ली है। अतः केन्द्र सरकार को जनता को स्पष्ट संकेत देना होगा कि वह नई रणनीति के तहत उन क्षेत्रों में जहां विकास की गति भारत की मुख्यधारा से पिछड़ गयी है वहां त्वरित विकास सुनिश्चित करने के लिय भी प्रतिबद्ध है और यदि किसी नये राज्य के सृजन की आवश्यकता पड़ती भी है तो वह फैसला लोतान्त्रिक तरीके से ही लिया जायेगा।

अंक : दिनाँक 15 जनवरी, 2010

संकुचित राजनीति से खेल को दूर रखें

श्री बाला साहब ठाकरे द्वारा आस्ट्रेलिया में भारतीय छात्रों के विरूद्ध हो रहे अपराधों के जवाब में आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों और आस्ट्रेलियाई क्रिकेट टीम को मुम्बई में खेलने पर रोक लगाने की कार्यवाही अत्यधिक अफसोसनाक और बचकाना प्रतिक्रिया है। ऐसा करके उन्होंने न केवल अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भारत की छवि को बिगाड़ा है बल्कि भारत के नौजवानों की भावनाओं को भी उकसाने का कार्य किया है।

बाला साहेब का अपने दरकते हुए गढ़ की पीड़ा को समझा जा सकता है। एक एक उनका परिवार टूट रहा है और साथ ही उनका राजनैतिक आधार भी। लेकिन, अपने राजनैतिक उद्देश्य के लिए वो खेल को राजनीति में घसीट रहे हैं, यह सर्वथा अनुचित है। ऐसा करके उन्होने अपनी संकुचित राजनीति का परिचय दिया है।

भारत में क्रिकेट को जो स्थान प्राप्त है और क्रिकेट को लेकर आम भारतीय जनमानस के मन में जो भावना है, शायद उसी की लोकप्रियता को भुनाने के लिये उन्होंने इस तरीके को चुना है। इससे पहले भी भारत के महानतम क्रिकेटर श्री सचिन तेन्दुलकर पर विवादास्पद टिप्पणियाँ कर अपनी संकुचित मानसिकता का परिचय दे चुके हैं।

आस्ट्रेलिया में जो कुछ भी भारतीय छात्रों के साथ हुआ या हो रहा है, वह निश्चित ही एक गम्भीर मुद्दा है ओर दोनों देशों की सरकारें इस ओर कूटनीतिक स्तर

पर कार्य कर रही हैं और आस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री और शिक्षा मंत्री अपनी चिन्ता कई बार व्यक्त कर चुके हैं। भारत के विदेश मंत्री ने भी अपनी दो टूक राय से आस्ट्रेलियाई सरकार को चेतावनी दे रखी है। परन्तु इसप्रकार के गैरजिम्मेदाराना बयान इस गंभीर विषय को हल्का करने का काम करते हैं।

भारतीय व आस्ट्रेलियाई क्रिकेट टीम दुनिया की दो महानतम टीमें हैं। पूर्व आस्ट्रेलियाई कप्तान श्री स्टीव वॉ भारत में अपने सामाजिक कार्यों की वजह से एक सम्मानजनक छवि को प्रस्तुत कर चुके हैं। आस्ट्रेलिया में जो कुछ भी भारतीय छात्रों के साथ हुआ उसके लिये आखिर क्रिकेट खिलाड़ियों को कैसे किसी अपराधिक घटना के लिये ज़िम्मेदार माना जा सकता है। हमारे खिलाड़ी हमारी सद्भावना ओर शान्ति के संदेशवाहक होते हैं। हमने सबसे अधिक परस्पर संदेह और भय के वातावरण के बावजूद एक शान्ति मिशन के रूप में अपनी टीम को पाकिस्तान भेजा था और हमारा यह प्रयास सफल भी रहा था। बाला साहेब जैसे पृथकतावादी नेताओं को अगर समय रहते नहीं रोका गया तो इस प्रकार की विध्वंसक शक्तियां भारतीय टीम को बार बार राजनीति में घसीट कर हमारे खिलाड़ियों के मनोबल को तोड़नें का प्रयास करती रहेंगीं।

अंक : दिनाँक 23 जनवरी, 2010

एक गैर जिम्मेदाराना फैसला

मुम्बई के टैक्सी ड्राईवरों के लिये पन्द्रह साल का मूल निवास का प्रणाम पत्र और लिखने की अनिवार्यता का महाराष्ट्र सरकार का फरमान एक अपरिपक्व और गैर जिम्मेदाराना फैसला है। राज्य सरकार ने अपने फरमान के समर्थन में जिस मोटर वाहन अधिनियम के जिस प्रावधान का हवाला दिया है वह सन् 1964 में इस अधिनियम मे शामिल किया गया था। आज अचानक राज्य सरकार को उसे लागू करने की बात याद आ गयी। यह स्पष्ट है कि सरकार के इस कदम से मुम्बई में टैक्सी चला रहे या इस व्यवसाय से जुड़े अधिकांशतः उत्तर भारतीय परिवारों और रोजगार की तलाश में मुम्बई आने वाले नये अप्रवासियों पर ही पड़ेगा।

जहां तक मराठी भाषा जानने की अनिवार्यता का सवाल है कोई भी अप्रवासी हो चाहे देश के भीतर हो या बाहर अपनी रोजी की खातिर उस धरती की भाषा को अपना ही लेता है और यदि ये टैक्सी चलाने वाले जिनमें से बहुत से अधिकतर बहुत पढ़े लिखे नहीं होते हैं मराठी अच्छी तरह नहीं भी बोल या लिख पाते हैं तो क्या यह काफी नही है कि वे देश की राष्ट्रभाषा बोलते और समझते हैं। इसलिये राज्य सरकार इससे मराठी मानूस को क्या संदेश देना चाहती है और वो किस भावना को समर्थन देना चाहती है क्या आज उसे मनसे और शिवसेना से ज्यादा मराठी साबित होना है। यह सरकार जनता द्वारा पूर्ण बहुमत से चुन कर आयी है यदि आम मराठी इसी भावना से प्रेरित होता तो निश्चित ही जनता राष्ट्रीय दलों के इस गठबन्धन को तीसरी बार अपना समर्थन नहीं देती। दिल्ली में भी कॉग्रेस के प्रवक्ता ने मुख्यमंत्री के वक्तव्य

का जिस प्रकार समर्थन किया उससे भी अन्य राज्यों में सत्ताधारी राष्ट्रीय पार्टी की छवि को नुकसान पहुॅचा है।

महाराष्ट्र सरकार को यह भी सोचना होगा और स्वीकार करना होगा कि मुम्बई के बाहर से काम करने के लिये आने वालों का भी मुम्बई को बनाने में बराबर का योगदान है, केवल टैक्सी ही नहीं ये अप्रवासी निर्माण की सभी प्रक्रियाओं में बराबर के सहभागी रहे हैं और मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता जैसे महानगर भारत की विविधता में एकता का प्रतीक और पूरे देश की धरोहर हैं। जहां तक उत्तर भारतीयों द्वारा स्थानीय लोगों के रोजगार के अवसर कम करने के दुष्प्रचार की बात है तो उन्हे ऐसी कौन सी विशेष सुविधा मिली हुई है जिससे स्थानीय लोगों के रोजगार के अवसर कम होते हैं सिवाय इसके कि वो वही काम सस्ते में करते हैं जिससे आम आदमी को ही सुविधा होती है। और सरकार को अपने संवैधानिक दायित्व को नहीं भूलना चाहिये कि भारत का संविधान भारत के प्रत्येक नागरिक को समान रूप से धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव के निषेध और रोजगार के अवसरों में समानता की गारण्टी देता है, इस प्रकार राज्य सरकार का यह तुग़लकी फरमान भारत के संविधान की मूल भावना के ही खिलाफ है। राज्य सरकार को चाहिये कि वो पृथकतावादी संर्कीण सोच वाली शक्तियों को काबू में करे न कि उन्हीं की भाषा बोलने लग जाये।

अंक : दिनाँक 6 फरवरी, 2010
सार्वजनिक जीवन में पारदर्शिता

प्रधानमंत्री द्वारा अपने मंत्रीमण्डलीय सहयोगियों को अपने मंत्रालय के दायित्व के अतिरिक्त अपने निजी व्यवसायों से स्वयं को अलग रखने तथा केन्द्र व राज्य के मंत्रीयों को अपनी सम्पत्ति की घोषणा करने का आदेश निश्चित ही एक स्वागत योग्य कदम है।

ऐसे में जबकि सार्वजनिक जीवन में शुचिता और आदर्श अपना स्थान खोते जा रहे हैं, जातिवादी, क्षेत्रवादी अवसरवादी राजनीति के उदय के साथ ही दैनिक प्रशासनिक कार्यों में उपर से नीचे तक लूटपाट का साम्राज्य फैल जाने के बाद और इसके फलस्वरूप युवा पीढ़ी राजनीति को सेवा न समझ कर व्यवसाय के रूप में देखने लगी हो, एसी चिन्ताजनक स्थिति में राजनेता ही इसप्रकार के उदाहरण प्रस्तुत कर के ही जनता के मन में लोकतन्त्र के प्रति विश्वास जीवित रख पायेंगे।

प्रधानमंत्री जी का यह कदम प्रशासन और प्रबन्धतन्त्र को अधिकाधिक प्रभावी बनाने के लिये संप्रग सरकार द्वारा गठित द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिश के आधार पर उठाया गया है। इसी आयोग की पहली सिफारिश के आधार पर ही भारत की जनता को सूचना का अधिकार अधिनियम जैसा महत्वपूर्ण अस्त्र प्राप्त हुआ था जिसने बहुत ही अल्प काल में सामाजिक और प्रशासनिक क्षेत्र में लालफीताशाही को लगाम लगाने तथा अन्य क्रांतिकारी परिवर्तन के उपलब्धिपूर्ण कार्य किये हैं।

आयोग ने भी उस तथ्य को स्वीकार किया था कि आज जनमानस के मन में यह भावना आम है कि सभी राजनेता और राजनैतिक दल भ्रष्ट हैं। राजनीति, प्रशासन और न्याय क्षेत्र में महत्वपूर्ण पदों पर बैठे लोगो के प्रति जनता में जिसप्रकार अविश्वास और निराशा की भावना घर कर गयी है तथा लोकतांत्रिक व्यवस्था में उसका घटता हुआ विश्वास हमारी लोकतान्त्रिक राज प्रणाली के लिये एक गंभीर खतरा है और ऐसे में तबकि सार्वजनिक पदों पर बैठे लोग हर वक्त मीडिया के निशाने पर हों तो यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि राजनेता स्वयं आगे आकर सार्वजनिक जीवन में शुचिता और पारदर्शिता का उदाहरण प्रस्तुत करें, तभी हम स्वच्छ प्रशासन और कल्याणकारी राज्य के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे और विश्व के इस सबसे बड़े लोकतन्त्र को भी बचा के रख सकेंगे।

यद्यपि आयोग ने मंत्रीयों के लिये इसे बाध्यता बनाये जाने की सिफारिश की थी परन्तु गठबन्धन की राजनीति में और विभिन्न क्षेत्रीय दलों की अपनी सोच और विचारधारा को देखते हुए फिलहाल, ऐसा हो पाना सम्भव नहीं दिख रहा है। इसलिये हमें आने वाले समय में इस देश की महान जनता से ही उम्मीद रखनी होगी कि वह देश के सभी राज्यों में सार्वजनिक जीवन में आने वाले सभी लोगों को वह इस कार्य के लिये बाध्य करे।

अंक : दिनाँक 13 मार्च, 2010

महिला आरक्षण बिल

राज्यसभा में महिला आरक्षण बिल का पास हो जाना भारतीय संवैधानिक और सामाजिक–राजनैतिक इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है। हालॉकि यह काम बहुत पहले हो जाना चाहिये था, लेकिन फिर भी देर आयद दुरूस्त आयद।

इस बिल को लाया जाना इस लिये जरूरी था क्योकि हमारे संविधान में पुरूषों एवं महिलाओं को समान अधिकार प्राप्त होने के बावजूद देश की सामाजिक, राजनैतिक वास्तविकता इससे कहीं भिन्न है। आजादी मिलने के साठ सालों बाद भी देश की पचास प्रतिशत आबादी का यह हिस्सा हमारे पारम्परिक परिवेश के कारण तरक्की की दौड़ में कहीं पीछे रह गया और अपनी पचास प्रतिशत आबादी को मुख्यधारा में लाये बिना हम देश के चहॅुमुखी विकास की कल्पना नहीं कर सकते। पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को आरक्षण दिये जाने के परिणाम स्वरूप उनके सशक्तिकरण एवं राजनैतिक चेतना, आत्म विश्वास और निर्णय लेने की क्षमता में अभूतपूर्व विकास हुआ है। साथ ही यह भी देखा गया है कि जो महिलायें आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र से चुन कर आयीं उन्होने अपने क्षेत्र में महिलाओं से सम्बन्धित योजनाओं में अपेक्षाकृत अधिक संसाधनों का निवेश किया है।

जहॉ तक इस बिल के विरोध की बात है सरकार द्वारा भी इस बिल को राज्यसभा में लाने से पहले सभी दलों को विश्वास में लिया जाता तो बेहतर होता साथ ही वे दल भी जो इस बिल का विरोध कर रहें हैं और इस बिल में अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यक समुदाय को आरक्षण की बात कर दलित व अल्पसंख्यक हितैषी

दिखने का प्रयास कर रहे हैं वे दल भी आत्मविश्लेषण करें क्योंकि कभी न कभी वे भी केन्द्र या राज्य में सत्ता में रहे हैं तब उन्हे इन वर्गों के हित का ध्यान क्यो नहीं रहा। फिर भी वे जो भी कह रहे हैं वह बातें आपसी विचार विमर्श से बाद में भी संशोधित की जा सकती हैं, लेकिन इस बात को लेकर जिस प्रकार से उन्होने राज्यसभा में हंगामा किया उससे देश शर्मसार हुआ है। अन्ततोगत्वा सुखद यह रहा कि इस दिशा में कम से कम एक शरूआत तो हुई। निश्चित ही इस बिल के पास हो जाने से देश ने दुनिया को यह दिखा दिया कि भारत में लोकतन्त्र की जड़ें न केवल मजबूत हैं बल्कि हमारा लोकतन्त्र हमारी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक प्रगतिशीलता का एक मजबूत स्तम्भ है।

अंक : दिनाँक 20 मार्च, 2010
दौलत की बेटी मायावती

उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री सुश्री मायावती द्वारा अपनी पार्टी रैली में एक हज़ार रूपये के नोटों से बनी करोड़ों रूपये मूल्य की पैंसठ किलो वज़नी माला पहन कर और फिर अगले दिन दोबारा नोटों की माला पहन कर, उत्तर प्रदेश में बसपा शासन में धन बल और बाहूबल के नग्न प्रदर्शन की बानगी प्रस्तुत की है। इससे पूर्व भी अपने जन्मदिन पर आयोजित पार्टी समारोहों में कथित रूप से पार्टी कार्यकर्ताओं द्वारा भेंट किये गये कीमती उपहार स्वीकार कर वे राजनैतिक अस्मिता और संवैधानिक प्रतिबद्धताओं की धज्जियॉ उड़ाती रही हैं। अभी कुछ वर्षों पूर्व आय कर विभाग ने अत्यधिक साधारण दलित परिवार से अपना राजनैतिक जीवन आरम्भ करने वाली सुश्री मायावती की 72 अचल सम्पत्तियों और उनके परिजनों के नाम तेरह करोड़ रूपये के तीन सौ उपहारों का पता लगाया था तथा उनके पचास बैंक खातों को सील कर दिया था।

मायावती सरकार ने भ्रष्टाचार को संगठित सरकारी भ्रष्टाचार का रूप प्रदान किया है। कीमती उपहार प्राप्त करना भ्रष्टाचार से कमाये गये अकूत काले धन को सफेद करने का सुश्री मायावती का अनोखा तरीका है। दरअसल समय समय पर मायावती सरकार के मंत्रियों को भी इस प्रकार के उपहार प्रदान कर सुश्री मायावती के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को सिद्ध करते रहना पड़ता है इसीलिये सुश्री मायावती को यह हार पार्टी के किसी साधारण सदस्य ने नहीं बल्कि उनकी सरकार के पॉच–छः वरिष्ठ मंत्रियों ने पहनाया था। सन् 2007 में मायावती सरकार के गठन के पश्चात एक इंजीनियर से सुश्री मायावती के जन्मदिन पर होने वाली रैली के उपलक्ष्य में पैसे वसूलने के क्रम में इंजीनियर की पिटाई कर हत्या के आरोप में पार्टी का एक विधायक अभी भी जेल में बंद है। मायावती सरकार में व्याप्त उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार और राजनैतिक प्रतिद्वन्दिता के कारण ही प्रदेश में ढॉचागत विकास योजनाओं में बाहरी निवेश न्यूनतम रहा है। अभी पन्द्रह दिनों पहले अरबों रूपये उपहार में प्राप्त कर चुकीं प्रदेश की इन्हीं मुख्यमंत्री ने प्रतापगढ़ में कृपालु जी महाराज के आश्रम में हुई भगदड़

की घटना में पैसठ मृतकों के परिजनों को सरकारी खजाना खाली होने के कारण मुआवज़ा देने में असमर्थता व्यक्त की थी।

सुश्री मायावती का कहना है कि उन्हें यह हार उनकी पार्टी के कार्यकर्ताओं ने भेंट किया है, गौरतलब है कि बसपा जिन दलित वर्गों की राजनीति करती है उनमें से अधिकांश लोगों ने तो एक हज़ार का नोट भी नहीं देखा होगा और न ही मायावती के चार बार मुख्यमंत्री बनने से उनके जीवन में कोई अन्तर आया है। लेकिन इन जातियों की राजनीति कर सुश्री मायावती जरूर दलित की बेटी से दौलत की बेटी बन चुकी हैं।

अंक : दिनाँक 3 अप्रैल, 2010

बच्चों को शिक्षा का अधिकार : एक ऐतिहासिक शुरूआत

अगस्त 2009 को संसद में पारित बच्चों का निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा पर अधिकार अधिनियम–2009, प्रधानमंत्री के राष्ट्र को संम्बोधन में इसकी घोषणा के साथ देश भर में लागू हो गया है। शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा देकर भारत ने न केवल संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन में दुनिया से किये अपने वायदे को निभाया है बल्कि आज भारत दुनिया के उन चुनिन्दा देशों में शामिल हो गया है जहॉ पर बच्चों के लिये अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करना उनका मौलिक अधिकार है।

यह अधिनियम न केवल 6 से 14 साल तक के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा निशुल्क उपलब्ध करायेगा बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता तथा उनके आसानी से उपलब्धता को भी सुनिश्चित करेगा और साथ ही शिक्षा विकास, शताब्दि लक्ष्य, सर्व शिक्षा और बाल श्रमिकों के सम्बन्ध में अपने दायित्व निर्वहन के भारत के सपने को पूरा करने में एक सेतु का कार्य करेगा।

यह वो शुरूआत है जो अगर हमने आजादी के फौरन बाद से ही अपना ली होती तो आज भारत की तस्वीर ही कुछ और होती, क्योंकि सामाजिक ताने बाने और अस्पृश्यता सहित बुनियादी सुविधाओं में तब में और अब में कोई बड़ा फर्क़ नहीं आया है। आजादी के बाद से अब तक बहुत से राज्यों में शिक्षा के क्षेत्र में आवश्यक संसाधनों को जुटाने पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। सरकार के लिये शिक्षा की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिये अधिनियम में निर्धारित अनिवार्य प्रावधानों को ही लागू करा पाना टेढ़ी खीर होगा। अधिनियम में प्रस्तावित शिक्षक छात्र अनुपात को लागू करने के लिये हमें पॉच लाख प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होगी जबकि अभी देश में दस से चालीस प्रतिशत अध्यापक निर्धारित आवश्यक आर्हता को पूरा नहीं करते है।। शिक्षा संविधान की समवर्ती सूची का विषय है ऐसे में केन्द्र की राज्यों पर निर्भरता बनी रहेगी, और बहुत से राज्यों की आर्थिक स्थिति भी ऐसी नहीं है कि वो इसका बोझ उठा पायें। केन्द्र को स्वयं इसके लागू होने के पहले ही वर्ष में लगभग सात हजार करोड़ रूपयों की कमी का सामना करना पड़ रहा है। देश में लाखों स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी है उनके समक्ष समस्या है कि वे या तो निर्धारित

समयावधि के भीतर अधिनियम में वर्णित सुविधाओं का उपलब्ध कराये या बन्दी का सामना करें, जबकि हमारे पास स्कूलों की संख्या ही अपर्याप्त है तो ऐसे में दोनो ही स्थितियों में नुकसान देश का ही है। प्रधानमंत्री जी स्वयं भी इन समस्याओं से अवगत हैं, इसीलिये उन्होने अध्यापकों, से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में अपना सहयोग देने की विशेष अपील की है।

इस सब के अलावा भी हमें अभी से ही यह मान कर चलना होगा कि इस अधिनियम में अभी कई संशोधनों की गुंजाइश है, हमें इसका दायरा बढ़ाना होगा। क्योंकि अगर हमें प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करना है तो हम बाल मन के विकास के आरम्भिक पॉच वर्षों की अनदेखी नहीं कर सकते हैं इसी प्रकार आठवीं तक शिक्षा से हम उन्हें किसी रोजगार योग्य नहीं बना रहे है। हमारे देश में व्याप्त गरीबी को देखते हुए यह आशा कम ही की जा सकती है कि गरीब परिवारों से आये ये बच्चे आठवीं से आगे की पढ़ाई जारी रख पायेंगें। ऐसी अधूरी सुविधा से हम किसी लक्ष्य पर नहीं पहुॅच रहे हैं। लेकिन इन चुनौतियों के बावजूद यह एक सुखद और ऐतिहासिक शुरूआत है।

हम अभिवाभकों, राज्य की सरकारों, सामाजिक संगठनों सहित सभी को इस अधिनियम की चुनौतियों को स्वीकारने का साहस करना होगा क्योंकि अब हम सब की बारी है कि भारत की आने वाली पीढ़ियों को शिक्षित करने में अपना योगदान दें।

अंक : दिनाँक 10 अप्रैल, 2010

माओवादियों का अक्षम्य अपराध : इस्तीफा नहीं हल चाहिय

छत्तीसगढ़ के दंतेवाडा में माओवादियों द्वारा छहत्तर सुरक्षाबल जवानों की नृशंस हत्या ने न केवल उनके जघन्य, बर्बर व क्रूर तरीकों व चेहरे को उजागर किया बल्कि उनसे मुकाबला करने की हमारी आन्तरिक कमजोरियों को भी उजागर किया है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों की समस्यायें जो भी हैं परन्तु माओवादियों का यह कृत्य किसी भी दृष्टि से क्षम्य व सहनीय नहीं है।

हमारे लम्बे चौड़े दावों के बावजूद पिछले कुछ वर्षों में माओवादियों की संहारक क्षमता बहुत तेजी से बढ़ी है और उनके प्रसार क्षेत्र का भी विस्तार हुआ है। वे भारत के पड़ोसी देशों से बड़ी तादाद में आधुनिक हथियार खरीद रहे हैं और इन्हें खरीदने के लिये वे खदान कम्पनियों से जबरन वसूली, अपहरण और बैंक डकैतियों जैसे गंभीर अपराधों में लिप्त हैं। अपने इस अभियान में वे अपनी सशस्त्र विचारधारा के माध्यम से देश के पिछड़े क्षेत्रों में सामाजिक आर्थिक असमानताओं, प्रशासनिक भ्रष्टाचार और लम्बी व महंगे न्यायिक उपचार से उपजे रोष का सहारा लेकर बेरोजगार नौजवान पुरूष व महिलाओं की भावनाओं को उकसा कर, उन्हें अपराधी बनाकर उनका भी शोषण कर रहे हैं। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि प्राकृतिक संसाधनों से लबरेज़ इन नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में गंभीर आर्थिक विषमतायें हैं परन्तु अपने हक़ प्राप्त करने के लिये जो रास्ता माओवादियो ने चुना है वह निश्चित ही असंवैधानिक और ग्रामीणों को और पिछड़ेपन व गंभीर दुष्परिणामों की ओर ले जा रहा है। इन क्षेत्रों में इनके

आतंक के कारण लगभग सभी ग्रामीणों को चाहे वे इनकी विचारधारा से सहमत हों या न हों इनका साथ देना मजबूरी है। और यही कारण है कि सरकार के गुप्तचर इतनी बड़ी संख्या में घात लगाकर बैठे माओवादियों का पता नहीं लगा पाये।

दंतेवाड़ा की घटना की नैतिक जिम्मेवारी लेकर गृहमंत्री श्री पी. चिदम्बरम द्वारा इस्तीफे की पेशक़श करना न केवल एक साहसिक कदम है बल्कि यह उनके नैतिक चरित्र को भी उजागर करता है। श्री चिदम्बरम एक अनुभवी व योग्य प्रशासक हैं और यदि वह सभी पक्षों को साथ लेकर चलें तो निश्चित ही हम इस समस्या का हल ढूंढ सकते हैं। अब तक केन्द्र की नक्सलवाद से निबटने की जो भी नीतियॉ रही हैं वे अपरिपक्व व दिशाहीन रही हैं। इसी क्रम में जहॉ एक ओर छत्तीसगढ़ में ऑपरेशन ग्रीन हंट के नाम पर एक ऐसा माहौल तैयार किया गया कि जैसे सरकार माओवादियों को सशस्त्र बल द्वारा नेस्तानाबूद करने जा रही है जबकि इस काम में लगाये बल को इस प्रकार की लड़ाई के लिये पर्याप्त प्रशिक्षण व साजोसामान भी प्राप्त नहीं था और जिन राज्यों में इस प्रकार की कार्यवाही की भी जा रही है वहॉ भी इन केन्द्रीय बलों को स्थानीय पुलिस के समन्वय से ही इस प्रकार की कार्यवाही करनी पड़ती है और ऐसे मे आपसी तालमेल का पूर्ण अभाव रहता है और इसका नुकसान हमें सुरक्षाकर्मियों की जानोमाल से उठाना पड़ता है। हमारा गुप्तचर विभाग भी ऐसे क्षेत्रों में जिन ग्रामीणों पर निर्भर है उन्हें भी सरकार पर्याप्त सुरक्षा उपलब्ध कराने में असमर्थ है। दूसरी ओर सरकार माओवादियों से बातचीत के लिये तो तैयार है परन्तु पहले उन्हे हिंसात्मक विचारधारा त्यागने की शर्त कुछ अटपटी है। सरकार ने यह शर्त जम्मू कश्मीर के पृथकतावादी संगठनों और उल्फा के साथ वार्ता से पहले तो नहीं लगाई थी। अधिकांश माओवादी देश के ग्रामीण अंचलों में रहने वाले भटके हुए आम ग्रामीण हैं। वार्ता से पहले सरकार को भी बड़प्पन दिखाते हुए उन्हें विश्वास में लेना होगा, संविधान के प्रति उनके विश्वास को जगाना होगा और एक निश्चित समय सीमा के भीतर उन कारणों को हल करना होगा जिन के कारण आज इस समस्या ने 13 राज्यों के 231 जिलों को अपनी चपेट में ले रखा हैं।

अंक : दिनाँक 24 अप्रैल, 2010

राष्ट्र विरोधी खाप पंचायतें

हिसार में जातीय वर्चस्व की लड़ाई में ऊँची जाति के लोगों द्वारा दलित घरों को आग के हवाले किए जाने की घटना से यह साबित हो गया है कि आज़ादी के साठ सालों बाद भी भले ही हमने नौ प्रतिशत की आर्थिक विकास दर को छू लिया हो और टैक्नोलॉजी के क्षेत्र में हमने पूरे विश्व में अपना परचम फहरा दिया हो, हम अपने सिकुड़ते हुए समाजों की मानसिकता को नहीं बदल पा रहे हैं।

भारत के कई हिस्सों में अभी भी जातीय पंचायतें हमारे देश के संविधान द्वारा स्थापित अदालतों के फैसलों और उनके अस्तित्व को चुनौती दे रही हैं। प्रेम–विवाह हो या जाति के सम्मान के नाम पर हत्या, खाप व जातीय पंचायतों के तालिबानी फरमान जारी होने का एक नया सिलसिला शुरू हो गया है।

जातीय वर्चस्व की इस आग को जातिवादी चुनावी राजनीति ने और हवा दी है। जिस प्रकार पिछले 20 सालों में जातिवादी राजनीति के आधार पर क्षेत्रीय राजनैतिक दल उभरकर सामने आए हैं, जातीय समाज के ठेकेदारों को अपनी जाति के वोट की अहमियत पता चल गई है और यही कारण है कि पढ़े–लिखे लोग भी इन खाप पंचायतों को आयोजित करने में बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं। इसके पीछे उनके निजी स्वार्थ निहित हैं न कि ऐसी अदालतें बनाकर जातीय स्वच्छता को बचाना। सम्भवतः समाज के ये ठेकेदार यह बात को समझने को तैयार नहीं है कि दुनिया के देश इक्कीसवीं सदी को भारत व चीन जैसे महान राष्ट्रों की सदी मान रहे हैं। उनके कृत्य व फरमान न केवल राष्ट्र विरोधी हैं, बल्कि यह उनके अपने समाजों को भी विकास की मुख्यधारा से अलग–थलग करने की पृष्ठभूमि है।

हमारे जातियों में बँटते समाजों के पीछे राष्ट्रवादी जननेताओं का अभाव और राजनैतिक पतन की भी अहम् भूमिका है। देश की संसद हो या राज्यों की विधानसभायें, सभी राजनैतिक दल प्रत्याशियों के निर्धारण में जातीय महत्व को नकार नहीं पा रहे हैं और न ही किसी राजनैतिक दल में यह साहस है कि वह इसके विरूद्ध आवाज उठा सके। यह समस्या एक ऐसे भस्मासुर के रूप में उभरी है, जो हमारे राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन के बाद हमारे नेताओं की कुर्बानियों से तैयार हुए सह–अस्तित्व के तानेबाने को बिखेरकर रख देगी। इस सबके बावजूद, हमें यह विश्वास है कि भारत की बहु–संख्यक राष्ट्रवादी जनता इस जातीय तनाव की राष्ट्र एवं समाज विरोधी समस्या से पार पा लेगी।

अंक : दिनाँक 8 मई, 2010

गैर कानूनी कैपीटेशन फीस

सरकार ने शिक्षा क्षेत्र से जुड़े हुए सुधारों के क्रम में इंजीनियरिंग व मेडिकल कालेजों में कैपिटेशन फीस लेने को कानूनी अपराध बनाये जाने सम्बन्धित बिल का संसद में पास होना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। कैपीटेशन फीस एक ओर हमारे सामाजिक न्याय के संवैधानिक नारे के साथ खुला मज़ाक है जिसमें समानता के आधार पर हमने देश के सभी वर्गों के छात्र छात्राओं को आगे बढ़ने के अवसर प्रदान करने का वायदा किया है वहीं दूसरी ओर इससे उन छात्र छात्राओं व उनके परिवारों की आर्थिक शोषण होता है जो अपने बच्चों के किसी सुनहरे भविष्य के लिये इन कालेजों को भारी रकम अदा करते हैं।

उच्च तकनीकि शिक्षा मुख्यतः डाक्टर व इंजीनियरिंग की शिक्षा के व्यापक प्रसार के लिये निजी तकनीकि शिक्षण संस्थाओं को इस क्षेत्र में प्रोत्साहित किया गया और आज इसी का असर है कि हम तकनीकि रूप से प्रशिक्षित नौजवानों की दुनिया की सबसे बड़ी आबादी के रूप में उभरे है। लेकिन इसका एक दूसरा पहलू भी है जिस वजह से आज हमें इस कानून ही आवश्यकता पड़ी है।

दरअसल, निजी तकनीकि शिक्षण संस्थाओं फीस के ढॉचे को नियन्त्रित करने व फीस का निर्धारण करने के लिये राज्य स्तर पर उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त

न्यायाधीश के अन्तर्गत समिति का गठन किया जाता है। इसके बावजूद कई मेडिकल व इंजीनियरिंग कालेज लुभावने विज्ञापनों के माध्यम से छात्रों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और कैपीटेशन या डोनेशन के नाम पर निर्धारित फीस के मुकाबले मनमानी फीस वसूल करते हैं। हालात तो यहॉ तक बिगड़ चुके हैं कि बकायदा सीटों की बोली लगाई जाती है और इसकी कोई रसीद भी नहीं दी जाती है और न ही शिक्षा की गुणवत्ता ही सुनिश्चित होती है। एसी स्थिति में यदि छात्र कालेज को छोड़ना चाहे तो बहुधा ये निजी कालेज उनके सार्टिफिकेट इत्यादि जब्त कर छात्र व उसके परिवार का जमकर शोषण करते हैं। इसलिये इस तरह का एक कानून लाना बहुत ही जरूरी था।

लेकिन सरकार को यह भी सोचना होगा कि सरकारी इंजीनियरिंग व मेडिकल कालेजों को जिस तरह शतप्रतिशत सरकारी अनुदान सहायता प्राप्त है वो आपसी प्रतियोगिता से त्रस्त निजी मेडिकल कालेजों को उपलब्ध नहीं है। नित नयी तकनीकि के आने के साथ उन्हें अपने खर्चों और विकास के लिये संसाधनों का स्वयं इंतजाम करना पढ़ता है इसके लिये उन्हें अपने कोटे की सीटों का ही सहारा होता है। आज अगर कैपीटेशन फीस रूक भी जाती है तो यह निजी संस्थान या तो बन्द हो जायेंगे या अन्य किसी रूप में यह फीस वसूलेंगें। दोनों ही स्थिति में नुकसान देश के छात्रों की ही होगा। इस लिये जरूरी यह है कि नीति और नियम इस तरह बनें की विदेशी शिक्षण संस्थानों के देश में आने के बाद हमारे बच्चों को उच्च स्तरीय शिक्षा भी मिले और हमारे देसी व निजी तकनीकि शिक्षण संस्थाओं का भी साथ में विकास हो और यह उन विदेशी संस्थानों के समक्ष मजबूती से टिके रह सकें। आखिर यह हमारी भावी पीढ़ी के भविष्य का सवाल है।

अंक : दिनाँक 22 मई, 2010

चुनौतियों और उपलब्धियों से भरा पहला साल

प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में यूपीए–2 सरकार ने अपना पहला साल पूरा कर लिया है। अन्य किसी भी सरकार के लिये उसकी उपलब्धियों के आंकलन के लिये एक साल का समय बहुत कम है परन्तु वस्तुतः सरकार का यह छठा साल है और किसी भी सरकार के लिये लगातार छः साल तक जनता की आकांक्षाओं पर खरे उतरते रहना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

पिछले छः सालों में विदेशनीति को छोड़कर लगभग सभी क्षेत्रों में भारी नीतिगत बदलाव देखने को मिले हैं। बाहर व भीतर से आर्थिक रूप से सुदृढ़ भारत की अर्थव्यवस्था के कारण सरकार को सामाजिक सुरक्षा व विकास के मद में अधिकाधिक निवेश के मौके मिले। इसी के फलस्वरूप आज मनरेगा जैसी समाजिक उत्थान की योजनाएं हों या ढॉचागत विकास, यूपीए–2 सरकार की दिशा उन्नतिशील रही है।

शिक्षा के क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन करते हुए सरकार ने 6 से 14 साल तक के बच्चों को शिक्षा का अधिकार देकर एक युगपरिवर्तक उपलब्धि हासिल की है। नरेगा में सुधार, भारत के प्रत्येक नागरिक को स्वास्थ्य सुरक्षा, छोटे व मझोले किसानों को कम ब्याज पर ऋण, युनीक आइडेन्टिटी नम्बर योजना के साथ साथ सरकार ने एक लम्बे

समय से टाले जा रहे महिला आरक्षण विधेयक को राज्य सभा में पारित करवाकर अपनी मंशा जता दी है। यद्यपि खाद्य सुरक्षा कानून अभी संसद में प्रस्तुत होना बाकी है परन्तु अन्त्योदय योजना के द्वारा गरीबी रेखा के नीचे रह रहे लोगों के लिये कम कीमत पर खाद्यान्न उपलब्धतता सुनिश्चित की जा चुकी है।

यह एक सुखद पहलू है कि अपने पहले बजट में यूपीए–2 सरकार ने प्रतिवर्ष 1 करोड़ 20 लाख नये रोजगार पैदा करने का लक्ष्य रखा है तथा खेती और किसानों को ऋण उपलब्धतता के लिये आवन्टित राशि में 38 हजार करोड़ रूपये की बढ़ोत्तरी की गयी है।

कश्मीर में आतंकवादी घटनाओं पर काबू पाकर कई दशक बाद स्थिति सामान्य होने की दिशा में अग्रसर है। वहीं सरकार पाकिस्तान से वार्ता का संकेत देकर अपने चीन सभी पड़ोसी मुल्कों के साथ सम्बन्ध सामान्य बनाने के लिये कटिबद्ध दिख रही है।

अपनी दूसरी पारी के पहले साल में सरकार को कई अभूतपूर्व चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा है। वैश्विक आर्थिक मंदी और मुद्रास्फीति के दवाब के बावजूद विकासदर को 7.25 प्रतिशत पर बनाये रखने के साथ ही घरेलू बाज़ार में आवश्यक वस्तुओं की मूल्यवृद्धि को काबू में लाना इस सरकार की सबसे बड़ी व चुनौतीपूर्ण उपलब्धि रही है। परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में तेल कीमतों में उछाल व मानसून की गड़बड़ी इस समस्या को तथा खाद्य सुरक्षा को एक चुनौती के रूप में सरकार के समक्ष दोबारा खड़ा कर सकती है।

दूसरी तरफ माओवादी हिंसा के रूप में आन्तरिक आतंकवाद एक नयी समस्या के रूप में सामने आया है। जिसका हल निकालना इस सरकार की आगामी सबसे बड़ी चुनौती होगी। इस समस्या के हल के लिये सरकार को सभी दलों को विश्वास में लेकर समस्या की जड़ तक जाना होगा तथा संसाधनों के नियन्त्रित उपयोग को सुनिश्चित करना होगा।

सूचना का अधिकार विधेयक के माध्यम से सरकार ने जनता के हाथों में भ्रष्टाचार पर काबू पाने तथा सरकारी कार्यों में पारदर्शिता लाने की सार्थक पहल की थी परन्तु इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है और भ्रष्टाचार अभी भी देश के विकास में सबसे बड़ी बाधा है आशा है कि यूपीए सरकार इस चुनौती को स्वीकार करते हुए इस दिशा में शीघ्र ही सार्थक पहल करेगी।

अंक : दिनाँक 5 जून, 2010

जमीनी सच्चाई स्वीकारे कॉग्रेस

कोलकाता व अन्य शहरी निकाय के चुनावों में तृणमूल कॉग्रेस को मिली भारी सफलता ने एक बार फिर यह साबित कर दिया है कि अपने ही गढ़ में वाम मोर्चा की जड़ें दरकने लगी हैं। हॉलाकि वाम मोर्चा नेतृत्व ने अपनी इस हार को बड़ी शालीनता से स्वीकार किया है और साथ ही उन्हें पश्चिमी बंगाल के एक वर्ष बाद होने वाले राज्य में विधानसभा चुनावों के नतीजों का भान भी हो गया है क्योंकि इन चुनावों में

तृणमूल कॉग्रेस को उन क्षेत्रों में भी भारी समर्थन मिला है जो अभी तक वाम मोर्चा के गढ़ माने जाते रहे हैं। वैसे तो एक वर्ष की अवधि कम नहीं होती है परन्तु लगातार हार से निराश कार्यकर्ताओं के बल पर इस हार को जीत में बदलना वाम मोर्चे के लिये नामुमकिन सा ज्यादा लग रहा है।

तृणमूल कॉग्रेस का यह विजय अभियान 2008 के पंचायत चुनावों से आरम्भ हो गया था परन्तु शहरी क्षेत्र में उसे जिस प्रकार की सफलता मिली है उसने इन चुनावों में अकेले अपने दम पर लड़ने वाली तृणमूल कॉग्रेस की राज्य में वाम मोर्चा के विकल्प के रूप में सर्व मान्यता को साबित कर दिया है। आज तृणमूल कॉग्रेस राज्य के 81 में 51 शहरी निकायों में बहुमत में है। ऐसे में देश की सबसे बड़ी पार्टी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को यह सोचना होगा कि राज्य में बिना तृणमूल का सहयोगी बने उसकी अपनी स्थिति क्या होगी। आज कॉग्रेस राज्य में हाशिये पर है। वह राज्य में पिछले 32 वर्षों से मुख्य विपक्ष की भूमिका में थी। राज्य की जनता वाम मोर्चा के विकल्प की तलाश में थी और कॉग्रेस के पास राज्य में ऐसा कोई नेतृत्व नहीं है जिस पर जनता विश्वास कर सके और जो उसे विकल्प का स्थान दिला सकता।

पिछले विधानसभा चुनावों में भी कॉग्रेस और तृणमूल कॉग्रेस के बीच सीटों के बंटवारे पर समझौता नहीं हो सका था और इसका लाभ वाममोर्चा गठबन्धन को मिला परन्तु 2009 के लोकसभा चुनावों में जब दोनो दल मिलकर लड़े तो वाममोर्चा के सांसदों की संख्या 35 से घटकर 15 रह गयी। वास्तविकता यह है कि आज पलड़ा तृणमूल कॉग्रेस के पक्ष में है और कॉग्रेस ने अब इस तथ्य को चुनाव नतीजे देखने के बाद स्वीकार भी किया है। जबकि इन चुनावों से पूर्व कॉग्रेस ने सीटों के बंटवारे में जिसप्रकार हठधर्मिता का प्रदर्शन किया था उससे यह संदेश गया कि वह अपरोक्ष रूप से वाममोर्चा का साथ देना चाहती है। नतीजतन उसे ही इसका ज्यादा नुकसान उठाना पड़ा। अन्य राज्यों में भी जहां कॉग्रेस का सीधा मुकाबला राजग जैसे सम्प्रदायिक गठबन्धनों से है, कॉग्रेस उससे ही टूट कर बने समान विचारधारा वाले दलों के साथ इसीप्रकार का व्यवहार करती है। आज भले ही भाजपा व उसके सहयोगी दल कमजोर हुये हों, परन्तु कॉग्रेस एक मात्र विकल्प नहीं है। 2009 के लोकसभा चुनावों में यूपीए को मिली भारी सफलता में उसके चुनाव पूर्व बने गठबन्धन वाले सहयोगी दलों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। आज कॉग्रेस के लिये भी आवश्यकता इस बात की है कि वह समान विचार धारा वाले छोटे दलों के अस्तित्व को स्वीकार करे और उन्हें उनका उचित सम्मान व स्थान दे।

अंक : दिनाँक 12 जून, 2010

भोपाल गैस पीड़ितों के साथ मज़ाक

26 साल के लम्बे इन्तज़ार के बाद पन्द्रह हजार लोगों की जान लेने वाले और लाखों लोगों की जिन्दगी तबाह करने वाले दुनिया के इस सबसे वीभत्स औद्योगिक विनाश के केस में आये फैसले ने पूरे देश को निराश किया है। ऐसा लगता है कि देशवासियों की यह नीयती बन चुकी है कि सदियों बाद उनको न्याय के नाम पर या

तो कुछ नहीं या अधूरा न्याय ही मिलता है। जिस तरह फैसले के साथ ही आरोपों व प्रत्यारोपों का दौर शुरू हो गया है उससे यह प्रतीत होता है कि हमारे देश में आम आदमी की ज़िन्दगी की कोई कीमत नहीं है। सभी सम्बन्धित संस्थाओं में अपना दामन साफ दिखाने की होड़ लग गयी है किसी को भी उन लोगों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है जिन्होने इस काण्ड में अपनी जानें गवांई या जिनकी जिन्दगियॉ तबाह हो गयीं। राज्य सरकार, केन्द्र पर, केन्द्र सरकार न्यायपालिका पर और न्यायपालिका जॉच एजेन्सियों पर आरोप लगा कर अपना पल्ला झाड़ रहे हैं। वास्तविकता यह है कि किसी भी संस्था ने अपने दायित्व का ईमानदारी से निर्वहन नहीं किया है। यदि ऐसा होता तो इतने बड़े काण्ड के दोषियों को इतनी मामूली सजा न मिलती, जबकि इस दुर्घटना के बाद हुई जॉच से यह स्पष्ट है कि कम्पनी में इस प्रकार के उत्पादन के लिये पर्याप्त सुरक्षा उपाय किये ही नहीं गये थे और खतरनाक रसायनों का प्रबन्धन भी मानकों के अनुरूप नहीं था जबकि इसी कम्पनी के अमेरिका स्थित कारखानों में चारगुना ज्यादा सुरक्षा व्यवस्था की जाती है। लापरवाही की हद तो यह है कि आज भी हजारों टन जहरीले रसायन भोपाल के यूनियन कार्बाइड परिसर में रखे हुए है जो भूगर्भीय जल को दूषित कर रहे हैं और उनसे अन्य किसी त्रासदी के होने का खतरा बना हुआ है। जो लोग इस दुघर्टना से प्रभावित हुए थे और आज भी जीवित है उन्हें उनसे वायदा की गयीं सुविधायें तक नहीं मिल रही हैं और जो सुविधायें उन्हें मिल भी रही हैं वे एक मज़ाक़ बन कर रह गयीं हैं। यूनियन कार्बाइड ने मुआवज़े के लिये जो वायदे किये थे उसे खरीदने वाली डॉ कैमिकल कम्पनी उन वायदों से मुकर रही है। राज्य व केन्द्र सरकार को इस विशय में भी ध्यान देना चाहिये। यूनियन कार्बाइड के चेयरमैन वॉरेन एण्डरसन को जिस तरह रातों रात जमानत देकर कथित रूप से सरकारी विमान द्वारा भोपाल से बाहर निकाल दिया गया था, ऐसा केन्द्र सरकार और विदेश मंत्रालय की जानकारी के बिना संभव नहीं था। अदालत के फैसले में वॉरेन एण्डरसन के विषय में कुछ न कहे जाने से भी कई सवाल उठते हैं कि आख़िर जो व्यक्ति इस कम्पनी के इतने महत्वपूर्ण पद पर था और जिसे भगोड़ा घोषित किया गया हो उस व्यक्ति का अदालत के फैसले में ज़िक्र भी नहीं है। वॉरेन एण्डरसन को भारत लाने का प्रयास गम्भीरता पूर्वक किया जाना चाहिये ताकि सत्य सबके सामने आ सके। ऐसे में जबकि सरकार न्यूक्लियर लाइबिलिटी एक्ट पर गंभीरता से विचार कर रही है, जरूरत ऐसे हादसों को रोकने के लिये भी देश में एक इण्डस्ट्रीयल लाइबिलिटी कानून की सख्त आवश्यकता है ताकि न केवल एसे हादसों को रोका जा सके बल्कि किसी दुर्घटना की स्थिति में जिम्मेदारी भी तय की जा सके और जिससे पीड़ित भोपाल कॉण्ड के पीड़ितों की तरह एक मज़ाक बन कर न रह जायें।

अंक : दिनाँक 19 जून, 2010

सिमटती भाजपा : दरकता गठबन्धन

हाल ही में पटना में सम्पन्न भाजपा की नवगठित कार्यकारिणी समिति की बैठक से यह उम्मीद की जा रही थी कि भाजपा यु.पी.ए. सरकार के ख़िलाफ कोई मुद्दा उठाएगी लेकिन भाजपा को सरकार के ख़िलाफ तो कोई नया मुद्दा नहीं मिला, परन्तु इस बैठक की परिणति भाजपा और राजग गठ्बन्धन की आपसी अन्तर्कलहों के उजागर होने के रूप में हुई। जहाँ एक ओर भाजपा के कई वरिष्ठ पदाधिकारियों के बैठक में भाग न लेने से यह पहले से ही चर्चा में थी, बची हुई कसर नई भाजपा के मुखौटे नरेन्द्र मोदी और बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के बीच मचे घमासान ने पूरी कर दी। जिस तरह से नीतीश कुमार ने भाजपा के पदाधिकारियों को दिए जाने वाले भोज कार्यक्रम को रद्द किया, भाजपा जैसी राष्ट्रीय पार्टी और प्रदेश में सहभागी दल की ऐसी बेइज्जती की उम्मीद नहीं की जा सकती थी।

इस घटना से यह तय हो गया कि राजग के घटक दल अब भाजपा को वह स्थान नहीं देने वाले जो अटल जी के समय में था। नीतीश कुमार ने इस समय जो तेवर अपनाए हैं, वही तेवर उड़ीसा में नवीन पटनायक के ऐन चुनाव से पहले राजग से पीछा छुड़ाते समय थे। दूसरी ओर मोदी और गडकरी जैसे भाजपा के वरिष्ठतम नेताओं ने सरकार की उपलब्धियाँ गिनाते समय नीतीश कुमार को दरकिनार करते हुए भाजपा को श्रेय दिया, उससे गठ्बन्धन की खींचतान स्पष्ट दिखाई देती है।

पाँच साल तक इसी भाजपा के साथ सत्ता सुख भोग चुके नीतीश जी प्रदेश के अल्पसंख्यकों को यह सन्देश देना चाहते हैं कि 2002 के गुजरात दंगों के आरोपी से उनका कोई वास्ता नहीं है। अब जबकि बिहार में चार माह बाद चुनाव होने हैं, ऐसे में नीतीश जी को अचानक से भाजपा के नए ब्राण्ड एम्बेसेडर नरेन्द्र मोदी अल्पसंख्यक विरोधी नज़र आने लगे हैं जो पिछले विधान सभा चुनावों में भाजपा–जदयु गठ्बन्धन के स्टार प्रचारक थे। यदि वह नरेन्द्र मोदी से इतनी ही दूरी रखना चाहते हैं तो उन्होंने गुजरात सरकार से मदद ली ही क्यों थी जिसे वह अब वापस करने की बात कर रहे हैं। वास्तव में दोनों ही नेता सस्ते प्रचार के भूखे हैं और विभाजन की राजनीति करते हैं। प्रदेश की जनता यह जानती है कि नीतीश जी ने किसी विचारधारा की वजह से नहीं, बल्कि सत्ता के स्वार्थ के कारण भाजपा के साथ यह गठ्बन्धन किया था। पिछले पाँच सालों में नीतीश जी ने केवल जातिवाद की राजनीति की है और केन्द्र से मिले पैसे एवं केन्द्रीय योजनाओं को अपने नाम से प्रचारित कर जनता को बेवकूफ समझने की ग़लती की है। प्रदेश के अल्पसंख्यक भी नीतीश कुमार के वास्तविक चरित्र को अच्छी तरह से पहचानते हैं और उम्मीद है कि वे आगामी विधान सभा चुनाव में नीतीश जी को इससे अवगत भी करा देंगे। भाजपा और राजग गठ्बन्धन दलों की वास्तविक पहचान उनकी साम्प्रदायिक नीतियाँ और मौकापरस्त राजनीति रही है। पहले एआईडीएमके फिर शिवसेना, बीजू जनता दल और अब जद–यू एक एक करके अपने राजनैतिक स्वार्थ वश राजग से जुड़ते व अलग होते रहे है। शुक्र इस बात का है कि अब साम्प्रदायिकता, विभाजन और जातीयता की राजनीति करने वाला यह गठ्बन्धन दरकने लगा है।

अंक : दिनाँक 2 जुलाई, 2010

चोट विचारधारा पर हो

छत्तीसगढ़ में एक बार फिर माओवादियों द्वारा सी.आर.पी.एफ. के जवानों की हत्या और उनके मृत शरीरों के साथ घृणित व्यवहार नें एक साथ कई प्रश्नों का जन्म दिया है। सुरक्षा बलों पर यह हमला उसी तर्ज़ पर किया गया जिस तरह दंतेवाड़ा में किया गया था, इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि हमारे सुरक्षाबल और सरकारी सूचना तन्त्र पहले की घटनाओं से सबक लेना नहीं जानते हैं। नक्सलियों ने जिस तरह जवानों की हत्या के बाद उनके मृत शरीरों को छति पहुॅचाई है उससे उनकी विचारधारा की पाशविकता और सरकारी तन्त्र के प्रति उनकी बढ़ती हुई घृणा का अंदाजा लगाया जा सकता है और यह एक अत्यन्त ही गंभीर विषय है। ये नक्सली कोई विदेशी भाड़े के या खरीदे हुए आतंकवादी नहीं हैं, आम जीवन में वे साधारण ग्रामीणों सी ही जिन्दगी जीते हैं। उनको भी संविधान ने वे सभी अधिकार दिये हैं जो हमें या आपको प्राप्त हैं बस अन्तर इतना है कि हमारी सामंती पुलिस और प्रशासनिक व्यवस्था, भ्रष्टाचार और लगभग असुलभ और महंगी न्याय व्यवस्था के तथा उनके आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के कारण वे अपने ही अधिकारो का लाभ उठाने से वंचित समाज का हिस्सा हैं। यह अलग बात है कि अपनी समस्याओं के निदान के लिये जो रास्ता उन्होंने चुना है वह प्रत्येक दृष्टिकोण से गलत व असंवैधानिक है। जरूरत इस बात की है कि हम उस विचारधारा/को गलत साबित करे जो भारत के करोड़ों ग्रामीण युवकों और युवतियों को इस खतरनाक दिशा में ले जा रही है।

आज नक्सलवाद के नाम पर मीडिया का एक वर्ग और विभिन्न राजनैतिक दल जिस तरह की बहस चला रहे हैं यह निहायत ही अफ़सोसनाक़ है। हम नक्सलियों से उस तरह नहीं लड़ सकते जैसा की भाजपा चीख चीख कर कह रही है। अपने ही नागरिकों का दमन कर हम कोई बड़ी बाज़ी जीतने नहीं जा रहे। सलवा जूडूम हो या आपरेशन ग्रीनहण्ट, दोनों ने स्थिति को बिगाड़ने का ही काम किया है। आज नक्सली भले ही उन क्षेत्रों के विकास में बाधक हों जिन क्षेत्रों में वे स्वयं रहते हैं क्योंकि इन अशिक्षित व भयग्रस्त ग्रामीणों को बरगलाने वालों के इस समस्या के बने रहने में अपने निजी स्वार्थ निहित हैं। वे संगठन को राजनैतिक आन्दोलन की ओर ले जाने के बजाये जबरन वसूली, अपहरण व लूटपाट जैसी घृणित गतिविधियों से धन कमा रहे हैं।

इस समस्या से ग्रस्त राज्यों ने भी इन क्षेत्रों के विकास के लिये तथा मुख्यधारा में वापसी करने वाले युवकों व युवतियों के पुनर्वास के जिन पैकेजों की घोषणा की है वे भी स्थिति को देखते हुए नाकाफी हैं। यह राज्य सरकारें यदि चाहें और उसमें पर्याप्त इच्छाशक्ति रहे और वह विकास सर्वोन्मुखी हो तो ऐसी विकास योजनाओं को इन क्षेत्रों ेंमें लागू होने में कोई बाधा नहीं आयेगी। परन्तु जिन राज्यों में इस समस्या का विस्तार है उनमें विभिन्न मत के राजनैतिक दलों के शासन के कारण समस्या के समाधान में बाधा आयी है। ऐसे में केन्द्र सरकार को चाहिये की वह सभी दलों की सहमती के साथ विचार विमर्श कर नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों के लिये कोई व्यापक

योजना बनाये जो क्षेत्रीय आर्थिक संतुलन के साथ साथ आम आदमी के जीवन स्तर में सुधार ला सके। साथ ही हमें यह भी देखना होगा ही जो भी योजनायें या पैकेज इन क्षेत्रों को दिये जायें उनका क्रियान्वयन भी निश्पक्ष और ईमानदाराना हो ताकि हम स्थानीय नागरिकों में प्रशासनिक व न्यायिक व्यवस्था के प्रति विश्वास पैदा कर सकें और उस विचारधारा पर चोट कर सकें जो यह कहती है कि बिना क्रान्ति व हिंसा के आम आदमी को उसके अधिकार नहीं मिल सकते।

अंक : दिनाँक 24 जुलाई, 2010

शर्मसार बिहार

बिहार विधान सभा में जिस प्रकार विपक्ष और सत्ताधारी गठबन्धन ने लोकतान्त्रिक मूल्यों की धज्जियां उड़ायी हैं उससे न केवल बिहार बल्कि पूरा देश शर्मिन्दा है। विधानसभा और संसद, संसदीय लोकतन्त्र के मन्दिर होते हैं उनकी गरिमा को कलुषित करने वाले बिहार के पक्ष और विपक्ष के सभी दलों के असली चेहरे जनता के सामने आ गये हैं।

बिहार विधानसभा में नियन्त्रक और लेखा परीक्षक की जिस रिपोर्ट पर यह बवाल मचा है वह रिपोर्ट जुलाई 2009 में विधानसभा के पटल पर रखी गयी थी, उस समय राष्ट्रवादी कॉंग्रेस पार्टी को छोड़कर किसी भी अन्य दल ने नीतीश कुमार से इस्तीफा मांगने की जरूरत नहीं समझी थी। दरअसल इस रिपोर्ट में 2001 से लेकर 2008 तक की अवधि में मनरेगा, इंदिरा आवास योजना आदि जैसे कार्यक्रमों में ग्यारह हजार चार सौ बारह करोड़ से अधिक की वित्तीय अनियमितता का विवरण दिया गया है उसमें से 42 महीने राजद की सरकार थी जिसे कॉंग्रेस का समर्थन हासिल था और शेष 28 महीने जदयू–भाजपा की सरकार का कार्यकाल रहा है। गौर तलब है कि यह रिपोर्ट मार्च 2008 तक के खातों की ही है अभी इसके बाद बहुत से खुलासे होने बाक़ी है। इसप्रकार बिहार के सभी राजनैतिक दल चाहे वह जदयू–भाजपा हो या कॉंग्रेस और राजद–लोजपा, इस भ्रष्टाचार के हम्माम में सभी नंगे हैं। इसलिये बिहार विधानसभा में और बिहार में जो कुछ भी ये राजनैतिक दल कर रहे हैं वो एक नाटक से ज्यादा कुछ नहीं है। विशेषकर खुद चारा घोटाले समेत अनेक आरोपों से घिरे रहे लालू जी का राजद भ्रष्टाचार के विरोध में सदन न चलने दे और नौबत मारपीट की आ जाये तो यह और भी शर्मनाक है। इसी तरह लालू–राबड़ी के भ्रष्टाचार के किस्से सुना सुना कर मुख्यमंत्री के पद पर पहुँचने वाले नीतीश कुमार के बिहार में सुशासन के दावों की सच्चाई आज खुद इस रिपोर्ट के बाद जनता के सामने हैं।

सबसे शर्मनाक तो यह है कि बिहार के मुख्यमंत्री ने जिस दम्भ से गुजरात की जनता के पैसे को बिहारीयों के गौरव से जोड़ कर वापिस कर दिया था उन्ही के शासन काल में बिहार के बाढ़ पीड़ितों को तीन हजार कुन्तल से अधिक के अनाज को वितरित किये जाने में नियन्त्रक और लेखा परीक्षक ने गंभीर अनियमिततायें पायी है यहां तक कि जिन ट्रकों के नम्बर खातों में दर्ज़ किये गये है वो दोपहियों के निकले।

नीतीश जी अदालत का फैसला आने के बाद बजाय सी.बी.आई जांच की मांग करने के विधानसभा में इस विषय पर बहस करवा रहे है जिससे सह प्रतीत होता है कि लालू हों या नीतीश दोनों ही इस रिपोर्ट से अपने अपने बचाव की मुद्रा में है और दो महीने बाद होने वाले विधानसभा चुनावों तक अपने अपने तरीकों से इसे टालना चाहते हैं क्योंकि दोनों के ही कार्यकाल की जांच होनी है। इस तरह बिहार में स्व0 जे.पी. की क्रान्ति के तीन सिपाहियों, लालू–पासवान और नीतीश ने भ्रष्टाचार में क्रान्ति का जो चक्र शुरू किया था वा`अब पूरा हो चुका है और निश्चित ही भाजपा ने इसमें उत्प्रेरक का कार्य किया है। भाजपा एक ओर तो डंके की चोट पर भ्रष्टाचारियों तथा आरोपियों का सरकार में साथ देती है और दूसरी ओर नैतिकता पर लम्बे लम्बे भाषण भी देती है चाहें बिहार हो या फिर कर्नाटक। इन्हीं दलों की बदौलत आज बिहार पूरी तरह आपराधिक और भ्रष्टाचारी राजनीति की कीचड़ में फंस चुका है। आशा है बिहार की जनता इन दलों को चुनावों में सबक सिखायेगी और बिहार को उसका खोया हुआ गौरव वापस दिलायेगी।